Vol. 7, Issue -2 (July 2018) pp. 12-18
Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

सांगीतिक भावाभिव्यक्ति में स्वरांतर की भूमिका

डा. देवानंद पाठक
आर्टिस्ट इन रेसीडेंस
वायलिन वादक
आई आई टी गुवाहाटी
Email: dpathak876@gmail.com

सारांश

संगीत में भाव एवं भावाभिव्यक्ति का एक प्रमुख स्थान है। किसी भी प्रकार के संगीत में भाव की उपेक्षा नहीं की जा सकती। भावाभिव्यक्ति के लिए वैसे तो अनेक कारक उत्तरदायी होते हैं परन्तु संगीत में प्रयोग होने वाले विभिन्न स्वरों के स्वरांतरों का भाव निर्मिति में एक विशिष्ट स्थान होता है। विभिन्न स्वरांतर एवं उनको प्रयोग करने का क्रम भाव सम्प्रेषण में विशिष्ट भूमिका निभाता है। स्वरांतरों का क्रम परिवर्तित करने पर राग एवं उससे उत्पन्न होने वाला भाव भी परिवर्तित हो सकता है। प्रस्तुत शोध पत्र में विभिन्न स्वरान्तरों में निहित भाव एवं उनके विभिन्न संयोजन से उत्पन्न होने वाले रागों द्वारा भावाभिव्यक्ति में उनकी भूमिका का विश्लेषण किया गया है।

मूल शब्द : सांगीतिक, भावाभिव्यक्ति, स्वरांतर, भाव, राग, भूमिका

संगीत भावाभिव्यक्ति एवं भाव सम्प्रेषण का एक सशक्त माध्यम है । भाव रहित संगीत अपना अस्तित्व नहीं रख पाता तथा जनमानस से उस संगीत का कोई सरोकार नहीं होता । कहा भी गया है – भावो ही भव कारणम् , अर्थात भाव इस संसार का एक प्रमुख कारक अथवा केंद्र बिंदु है । संगीत की आत्मा उससे उत्पन्न होने वाले भाव में होती है एवं जिस संगीत में भाव रूपी आत्मा ना हो वह संगीत मृत संगीत समान है । प्राचीन ग्रंथों में वर्णित तथ्यों से भी यह सिद्ध होता है कि यह सांगीतिक भाव की ही पराकाष्ठा है जिसके प्रभाव से नर नारी एवं पशु – पक्षी सभी श्री कृष्ण की वंशी की धुन से आकर्षित होकर मंत्रमुग्ध हो जाते थे । तानसेन के गायन से वर्षा का होना एवं दीपक का जलना आदि का उल्लेख भी संगीत में निहित भावात्मकता को दर्शाता है ।

सांगीतिक दृष्टिकोण से भावाभिव्यक्ति से लेकर रस परिपाक तक की यात्रा विभिन्न स्वर सन्निवेश के द्वारा की जाती है । स्वर सन्निवेश के अंतर्गत भावानुरूप विशिष्ट स्वरांतरों वाले स्वरों का समावेश होता है। आचार्य बृहस्पति ने भी स्वर सन्निवेश से रस परिपाक की प्रक्रिया को इस प्रकार बताया है – "दूसरों को सुनाने एवं आनंदित करने की दृष्टि से गीत की सृष्टि करते समय गायक या वादक जिन भावों की अभिव्यक्ति करता है वे वास्तविक भावों का अभिनय ही होते हैं।" "गायक सार्थक शब्दों का आश्रय लिए बिना ही स्वरसंवलित, शुष्काक्षरों से अथवा आलाप द्वारा भावाभिव्यक्ति करता है, उसकी कंठ ध्वनि अनुकूल काकु से युक्त होती है और उसकी मुद्राएँ भावानुकूल होती जाती हैं, परंतु वह अभिनेता की भांति पात्र विशेष के वेश से युक्त नहीं होता। गायक स्वरसंनिवेश के द्वारा जिन भावों की अभिव्यक्ति करता है वो साधारण्य एवं 'प्राणिमात्र हृदयसंवाद' के कारण सावधान श्रोताओं की रजस्तमोनिर्मित रागद्वेष ग्रंथियों को विगलित करके उनके हृदय में उस चेतना का अनुभव करा देते हैं जिसे रस कहते हैं ।"[1] स्वरान्तरों द्वारा भावाभिव्यक्ति के अध्ययन से पूर्व भाव एवं उससे सम्बंधित तत्वों का विवेचन आपेक्षित हो जाता है –

भाव – भाव शब्द को विद्वानों ने इस प्रकार परिभाषित किया है – मानव के अन्दर निहित भावनाएँ जो उसके ह्दय में चिरकाल से व्याप्त होती हैं भाव कहलाते हैं। महान ग्रंथकार भरत मुनि ने भाव को कुछ इस प्रकार परिभाषित किया है –

भावाः इति कस्मात किम् भावंतीति भावाः, किम् वा भावयन्तीति भावाः।[2]

अर्थात जो होते हैं वे भाव हैं, जो भावित करते हैं वे भाव हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि मन में उत्पन्न होने वाले परिवर्तन या विकार भाव कहलाते हैं। भावाभिव्यक्ति में विभिन्न कारकों की भूमिका होती है जिन्हें स्थाई भाव, विभाव, संचारी भाव एवं अनुभाव कहते हैं।

भावाभिव्यक्ति के समय मुख्य रूप से विद्यमान भाव स्थाई भाव कहलाता है। भरत मुनि ने ऐसे आठ स्थाई भाव माने हैं –

रतिर्हासश्च शोकश्च, क्रोधोत्साही भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयाश्चेति, स्थाई भावाः प्रकीर्तिताः।।[3]

अर्थात् रति, हास्य, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा तथा विस्मय ये आठ स्थाई भाव हैं।

विभाव – वे साधन जिनके द्वारा भाव का बोध होता है उन्हें विभाव कहते हैं । इनमे वे समस्त परिस्थितियाँ भी सम्मिलित होती हैं जिनसे भाव का बोध होता है । इसके दो प्रकार होते हैं आलंबन एवं उद्दीपन । आलंबन में वह पात्र होता है जिसके द्वारा स्थाई भावों को उसकी सीमा तक पहुंचाया जाता है । इसके अन्दर नायक नायिका आदि आते हैं । उद्दीपन के अंतर्गत वे क्रियाएँ एवं परिस्थितियाँ एवं प्राकृतिक सौंदर्य आदि आते हैं जिससे भावों को उत्तेजित किया जा सके । सांगीतिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि गायक अथवा वादक आलंबन के अंतर्गत आते हैं एवं उनके द्वारा प्रयोग किये जाने वाले विशिष्ट स्वरान्तरों से युक्त स्वर सन्निवेश उद्दीपन के अंतर्गत आते हैं जिनकी स्थाई भाव का बोध कराने में विशेष भूमिका होती है ।

अनुभाव – भावोत्पत्ति के फलस्वरूप मनुष्य के मन में उत्पन्न होने वाली चेष्टाएँ एवं विभिन्न अनुभूतियाँ जो उसकी मानसिक स्थिति को परिवर्तित करती हैं उन्हें अनुभाव कहते हैं ।

सांगीतिक भावाभिव्यक्ति के लिए वैसे तो अनेक कारक उत्तरदायी होते हैं परन्तु उनमे से जो सबसे महत्वपूर्ण कारक है वो है प्रयोग में लाये जाने वाले स्वरांतर अर्थात विशिष्ट अंतराल वाले स्वर। उत्तर भारतीय संगीत में एक सप्तक में शुद्ध और कोमल मिलाकर कुल 12 स्वर माने गए हैं एवं प्रत्येक स्वर से दूसरे स्वर की दूरी जिसे हम स्वरांतर कहते हैं वह निश्चित है । इस प्रकार कुल 11 स्वरांतर एक सप्तक में विद्यमान होते हैं । प्रत्येक स्वरांतर में एक ना एक भाव अवश्य होता है परन्तु वह अकेला संपूर्ण भाव को प्रकट करने में समर्थ नहीं होता अतः वह अपने साथ कुछ और स्वरान्तरों के जुड़ जाने पर एक विशिष्ट भाव को प्रकट करने में सक्षम हो जाता है । जिस प्रकार एक चित्र में विशिष्ट भाव उत्पन्न करने के लिए समस्त रंगों का प्रयोग नहीं किया जाता अपितु कुछ विशेष रंगों के चयन से उस भाव को उभारने में सहायता प्राप्त होती है ठीक उसी प्रकार सांगीतिक भावाभिव्यक्ति में भी समस्त स्वरांतरों का प्रयोग न करते हुए विशिष्ट स्वरान्तरों के चयन से ही भाव उत्पन्न किये जाते हैं । प्रत्येक रंग की भांति प्रत्येक स्वरांतर का भी अपना गुण होता है जिसके आधार पर ही एक विशिष्ट भाव को उभारने के लिए उसका प्रयोग किया जाता है ।

एक सप्तक में विद्यमान विभिन्न स्वरांतरों में निहित विशिष्ट भावों को संगीतज्ञों एवं विद्वानों द्वारा पहचाना गया तथा उनको विभिन्न प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया गया है । प्रस्तुत सारिणी[4] में विभिन्न स्वरान्तरों से उत्पन्न होने वाले भावों का उल्लेख किया गया है–

स्वरांतर	**स्वर**	**भाव**
सम स्वरांतर (Consonant Interval)	सा–ग , सा–म , सा–प	सुखदता, माधुर्य, सकारात्मकता
विषम स्वरांतर (Dissonant Interval)	सा–<u>रे</u>, सा–म', सा–<u>ध</u> आदि	नकारात्मकता, क्रोध, डर
शुद्ध स्वर स्वरांतर (Major Intervals)	सा–रे, सा–ग, सा–प, आदि	ऊर्जापूर्ण, वीरता
कोमल स्वर स्वरांतर (Minor Intervals)	सा–<u>रे</u>, सा–<u>ग</u> आदि	दुर्बलता, उदासीनता
एक स्वरांतर (Minor Second)	सा–<u>रे</u>, ग–<u>म</u>, म'–प आदि	निराशा, करुणा, वेदना
दो स्वरांतर (Major Second)	सा–रे, रे–ग, म–प आदि	उत्कंठा, खुशी
तीन स्वरांतर (Minor Third)	सा–<u>ग</u>, म–<u>ध</u>, रे–म आदि	दु:ख, त्रासदी
चार स्वरांतर (Major Third)	सा–ग, रे–म', प–नि आदि	सुखद, प्रसन्नता, कीर्ति
पांच स्वरांतर (Perfect fourth)	सा–म, प–सां, म–<u>नि</u> आदि	प्रोत्साहन, प्रफुल्लता, करुण
छः स्वरांतर (Tritone)	सा–म', ग–<u>नि</u>, प–<u>रें</u> आदि	उग्रता, भय, तनावग्रस्त
सात स्वरांतर (Perfect fifth)	सा–प, रे–ध, ग–नि आदि	स्थिरता, प्रसन्नता
आठ स्वरांतर	सा–<u>ध</u>, रे–<u>नि</u> आदि	दु:ख, करुण, वेदना

(Minor sixth)

नौ स्वरांतर	सा–ध, रे–नि, ग–सां आदि	वीरता, प्रसन्नता, उत्कंठा

(Major Sixth)

दस स्वरांतर	सा–नि॒, रे–सां आदि	दुःख, उदासीनता, शोकाकुल

(Dominant Seventh)

ग्यारह स्वरांतर	सा–नि, रे–रें॒ आदि	उग्रता, लालसा, प्रतीक्षा

(Major Seventh)

बारह स्वरांतर	सा–सां, रे–रें आदि	शांत, स्थिरता

(Octave)

उपरोक्त सारिणी के माध्यम से स्वाभाविक रूप से यह कहा जा सकता है कि शुद्ध स्वरों के अंतराल अधिकतर प्रसन्नता, सकारात्मकता एवं स्थिरता का भाव उत्पन्न करते हैं वहीं कोमल अथवा तीव्र स्वर वाले स्वरांतर दुःख, करुणा, एवं भय का भाव उत्पन्न करने में सहायक होते हैं।

साइंटिफिक अमेरिकन मासिक पत्रिका के एक आलेख 'Musical intervals sway moods'[5] के अनुसार, Daniel Bowling जो कि ड्यूक विश्वविद्यालय के एक Neuroscientist हैं, उन्होंने कुछ पाश्चात्य एवं कुछ भारतीय धुनों का विश्लेषण कर यह पाया कि जिन धुनों में कम अंतर वाले स्वरांतर का प्रयोग किया गया उनमे करुणा एवं दुःख का भाव उत्पन्न होता है एवं जिनमे अधिक स्वरों वाले स्वरांतर का प्रयोग किया गया उन धुनों में प्रसन्नता एवं ख़ुशी का भाव जागृत होता है । एक धुन में विभिन्न स्वरान्तरों का क्रम भी भाव सम्प्रेषण में मुख्य भूमिका निभाता है अथवा हम यह कह सकते हैं कि स्वरांतरों के क्रम में परिवर्तन होने से भी भाव परिवर्तित होता है।

हिन्दुस्तानी संगीत में राग का एक विशेष महत्व होता है क्योंकि इन्हीं रागों द्वारा कलाकार विभिन्न भावाभिव्यक्ति करने में सहायक होता है। राग और उसमे विद्यमान विशिष्ट स्वरांतर भाव सम्प्रेषण के लिए उत्तरदायी होते हैं। राग के विषय में संगीत रत्नाकर में कहा गया है कि यह स्वर एवं वर्ण से विभूषित वह रचना है जो मन को रंजित करती है।[6] मन को रंजित करने के लिए भाव की निष्पत्ति होना परमावश्यक है। हिन्दुस्तानी संगीत में एक राग के स्वरों में एक विशिष्ट भावाभिव्यक्ति की क्षमता होती है परन्तु विशिष्ट स्वर लगाव से गायक एवं वादक एक ही राग में एक से अधिक भावों की अभिव्यक्ति करने में सक्षम होते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि भावाभिव्यक्ति के लिए राग के साथ साथ स्वरान्तरों का विशिष्ट मेल भी उत्तरदायी होता है । राग में निश्चित किये गए स्वर–लगाव के अलावा राग के नियम को ध्यान में रखते हुए उसी राग में अन्य स्वर वर्णों का प्रयोग करने पर कभी–कभी अन्य भाव की अनुभूति होती है। श्रेष्ठ कलाकार अपनी कला प्रदर्शन में आविर्भाव एवं तिरोभाव का प्रयोग कर एक ही राग के स्वरों से अनेक भावों की निष्पत्ति करते हैं । तिरोभाव करते समय अधिकांशतः एक ही राग में दूसरे स्वर को षड्ज मान कर अन्य रागों की छाया दिखाई जाती है जो भाव परिवर्तन में सहायक होती है।

षड्ज को परिवर्तित कर अर्थात अन्य स्वर को षड्ज मानकर शेष स्वरों का आरोह अवरोह करने की प्रक्रिया प्राचीन समय में भी प्रचलित थी जिसे संगीत शास्त्रकारों ने मूर्च्छना की संज्ञा दी थी। मूर्च्छना को प्राचीन मनीषियों ने इस प्रकार परिभाषित किया है–

क्रमात्स्वारानां सप्तनामारोहेश्चावरोहणम् ।
मूर्च्छनेत्युच्यते ग्रामत्रये ताः सप्तसप्त च ।। –संगीत दर्पण

अर्थात् सात स्वरों का क्रम से आरोह तथा अवरोह करना मूर्च्छना कहलाता है । तीन ग्राम हैं, जिनमें से प्रत्येक की सात –सात मूर्च्छनाएँ हैं ।

तत्र मध्यस्थषड्जेन षड्जगामस्य मूर्च्छना ।
प्रथमारभ्यतेन्यास्तु निषादाद्यैरधस्तनैः ।। –संगीत दर्पण

अर्थात्– मध्य स्थान के षड्ज स्वर से षड्ज ग्राम की पहली मूर्च्छना आरम्भ होती है । शेष छह मूर्च्छनाएँ स्वर के नीचे के निषादादि स्वरों से शुरू होती हैं ।[7]

उपरोक्त परिभाषा के अनुसार किसी भी स्वर से आरम्भ करके उसके आगे के सात स्वरों को क्रम से आरोह अवरोह करना मूर्च्छना कहलाता है । इस प्रक्रिया का सूक्ष्म रूप से अध्ययन कर संगीत विद्वानों ने यह पाया कि– "हमारे शास्त्रकारों ने जो मूर्च्छना के स्वर दिए हैं, उन्हें केवल आरोह अवरोह नहीं समझ लेना चाहिए बल्कि इनके अन्दर जो रहस्य छिपा हुआ है उस पर ध्यान देकर ही मूर्च्छनाओं की उपयोगिता जानी जा सकती है और वह रहस्य है विभिन्न मूर्च्छनाओं के आरंभिक स्वर को षड्ज मान कर आरोह एवं अवरोह करने से विभिन्न रागों की उत्पत्ति होना ।"[8]इस प्रकार से एक ग्राम अथवा ठाट से अन्य ठाटों अथवा रागों की उत्पत्ति की प्रक्रिया को मूर्च्छना पद्धति भी कहा जा सकता है ।

मूर्च्छना पद्धति द्वारा एक ही राग के अलग–अलग स्वरों को षड्ज मानकर जब उस नवीन षड्ज के आधार पर अन्य स्वरों को गाया जाता है तब स्वरान्तरों के क्रम में परिवर्तन होने के कारण एक नवीन राग के स्वर प्रकट हो जाते हैं एवं परिणामस्वरूप उस राग से उत्पन्न होने वाले भाव भी उद्दीप्त होने लगते हैं । उदहारण के लिए बिलावल ठाट के अलग–अलग स्वरों को षड्ज मानकर विभिन्न ठाटों के स्वरों को प्राप्त किया जाता है जिसका उल्लेख निम्न सारिणी में किया गया है –

षड्ज की स्थिति	**स्वर**	**स्वरांतर क्रम**	**ठाट**
षड्ज को सा मानकर	सा रे ग म प ध नि सां रें गं मं पं धं निं	2,2,1,2,2,2,1	बिलावल
ऋषभ को सा मानकर	सा रे ग म प ध नि सां	2,1,2,2,2,1,2	काफी
गंधार को सा मानकर	सा रे ग म प ध नि सां	1,2,2,2,1,2,2	भैरवी
मध्यम को सा मानकर	सा रे ग म' प ध नि सां	2,2,2,1,2,2,1	कल्याण
पंचम को सा मानकर	सा रे ग म प ध नि सां	2,2,1,2,2,1,2	खमाज

धैवत को सा मानकर	सा रे ग म प ध नि सां	2,1,2,2,1,2,2	आसावरी
निषाद को सा मानकर	सा रे ग म म' ध नि सां	1,2,2,1,2,2,2	———

उपरोक्त थाटों से विभिन्न राग प्राप्त होते हैं जो विभिन्न भावाभिव्यक्ति में सहायक होते हैं । मूर्च्छना में सात स्वरों का प्रयोग किया जाता था किन्तु इनसे प्राप्त रागों की औडव एवं षाडव जातियों में भी इसी प्रक्रिया के अनुसार अन्य रागों को भी प्राप्त किया गया है । औडव जाति में पांच स्वर होने के कारण स्वरान्तरों में परिवर्तन हो जाता है जिसके फलस्वरूप उस राग से उद्दीप्त होने वाला भाव भी संपूर्ण जाति वाले राग से अलग हो जाता है ।

उदाहरण के लिए राग भूपाली जो कि बिलावल के ही पांच स्वरों को लेकर बना है, इसके विभिन्न स्वरों को सा मानने पर चार अलग रागों की उत्पत्ति हो जाती है इसका उल्लेख निम्न सारिणी में किया गया है –

षड्ज की स्थिति	**स्वर**	**स्वरांतर क्रम**	**राग**
षड्ज को सा मानकर	सा रे ग प ध सां रें गं पं धं	2,2,3,2,3	भूपाली
ऋषभ को सा मानकर	सा रे म प नि सां	2,3,2,3,2	मधमात सारंग
गंधार को सा मानकर	सा ग म ध नि सां	3,2,3,2,2	मालकौंस
पंचम को सा मानकर	सा रे म प ध सां	2,3,2,2,3	दुर्गा
धैवत को सा मानकर	सा ग म प नि सां	3,2,2,3,2	धानी

उपरोक्त सारिणी से यह ज्ञात होता है कि राग भूपाली गाते समय मूर्छना पद्धति से अलग–अलग स्वरों को सा मानकर क्रमशः राग मधमात सारंग, मालकौंस, दुर्गा, एवं धानी रागों की छाया दिखाई जा सकती है और फलस्वरूप इन रागों के विशिष्ट भावों को भी उद्दीप्त किया जा सकता है। एक अन्य उदाहरण में राग ललित के मध्यम को सा मानकर गाने से राग तोड़ी के स्वर प्राप्त होते हैं एवं इसी प्रकार से अनेक उदाहरण हिन्दुस्तानी संगीत में हैं।

उपरोक्त सारिणियों से यह ज्ञात होता है कि राग निर्मिति में स्वरान्तरों और उनके क्रम का विशेष योगदान होता है एवं इन्हीं स्वरान्तरों के विशेष क्रम में प्रयोग होने पर राग द्वारा विशिष्ट भाव की अभिव्यक्ति सहजता से की जाती है । विभिन्न रागों से उत्पन्न होने वाले विशिष्ट भावों का अध्ययन कर प्राचीन विद्वानों एवं ग्रंथकारों ने प्रत्येक राग एवं रागिनियों को चित्रित किया तथा उनके इन चित्रों में विशिष्ट भाव स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं । डा. जया नर्गिस के लेख 'भारतीय संगीत में राग–कल्पना की परम्परा' के अनुसार्–"राग जौनपुरी कोमल एवं करुणापूर्ण है, अडाना राग उत्साहपूर्ण, राग आसावरी कमनीय, राग तोड़ी प्रगल्भा नायिका की वेदना युक्त, राग मारवा अपनी पीड़ा छुपाने वाला नायक, राग मालकौंस शांत, गंभीर एवं सौम्य, राग हिंडोल आवेशयुक्त, राग खमाज संयोग एवं वियोग श्रृंगारपूर्ण अर्थात मुग्धा और विरहिणी नायिका की मनोदशा को प्रकट करता है ।"[9] इसके अतिरिक्त राग भैरव भक्तिपूर्ण, राग शंकरा वीर एवं क्रोध का भाव तथा राग भूपाली आनंद एवं शांत भाव अभिव्यक्त करने में सक्षम है ।

निष्कर्ष –

स्वरांतर एवं उनके विशिष्ट क्रमानुसार प्रयोग के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि भावोत्पत्ति में इनकी एक प्रमुख भूमिका होती है एवं सही स्वरांतर तथा उनके उचित क्रम का चयन कर विशिष्ट भाव का उद्दीपन सरलता से किया जा सकता है । राग में प्रयुक्त होने वाले स्वरांतर एवं उनका क्रम उस राग से उत्पन्न होने वाले भाव के लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी होते हैं । प्रत्येक राग में प्रयोग की जाने वाली स्वर–संगति निश्चित होती है जो राग के भावानुरूप होती है एवं यह स्वर संगति विशिष्ट स्वरान्तरों पर आधारित होती है। एक ही राग से अलग–अलग भावों की उत्पत्ति में भी इन्हीं स्वरान्तरों एवं उनके क्रम की एक महती भूमिका होती है। यह सर्व विदित है कि भाव के पूर्ण सम्प्रेषण में बहुत से अन्य कारकों की भूमिका भी होती है जैसे मींड, कण, मुर्की, आन्दोलन, तीव्रता आदि परन्तु भावाभिव्यक्ति एवं भावोत्पत्ति का आधार स्वरांतर में निहित होता है । भावाभिव्यक्ति एवं संगीतात्मक भाव सम्प्रेषण एक वृहत विषय है एवं मेरा यह मत है कि इस विषय में अन्य नवीन तथ्यों एवं शोध की अनेक संभावनाएं हैं ।

सन्दर्भ –

1. बृहस्पति, कैलाश चन्द्र देव, *भरत का संगीत सिद्धांत,* हिंदी समिति प्रकाशन शाखा लखनऊ, पृष्ठ सं. 269 – 270
2. शर्मा मृत्युंजय, *संगीत मैनुअल,*एच.जी. पब्लिकेशन नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 296
3. शर्मा मृत्युंजय, *संगीत मैनुअल,* एच.जी. पब्लिकेशन नई दिल्ली, पृष्ठ सं. 297
4.Chase Wayne, *How Music Really Works*, 2nd Edition, Roedy Black Music, Table 21, https://www-howmusicreallyworks-com/Pages&Chapter&4/4&4-html
5- Morgen E. Peck, *Musical intervals sway moods*, Scientific American ,www-scientific American-com/ Music Intervals Sway Moods/ 1st July/2012
6. वसंत, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय हाथरस, पृष्ठ सं. 115, 12वां संस्करण
7. वसंत, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय हाथरस, पृष्ठ सं. 123, 12वां संस्करण
8. वसंत, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय हाथरस, पृष्ठ सं. 124, 12वां संस्करण
9. नर्गिस जया, http://www.hforhindi.com/lekh-bharatiya-sangeet-men-rag-kalpana-ki-parampara/ April 29, 2017